बदलता समय और नारी

-ब्र.कु.मोनिका, शांतिवन

इस आठ मार्च को अंतर्राष्ट्रीय महिला दिवस पर हम आज की पीढ़ी को तो शुभकामनाएं देते ही हैं। लेकिन पिछली पीढ़ी की महिलाओं और उनकी कला व योग्यताओं को भी सलाम करते हैं। आज भी ये 'कल की महिलाएं' उतनी ही सशक्त हैं, मगर आज की नारी के 'एम्पावरमेंट' की परिभाषा के कारण पृष्ठभूमि में चली गई हैं और उन्हें कोई याद करना ज़रूरी नहीं समझता।

आठ मार्च महिलाओं का अपना दिन, दुनिया भर में उनके जश्न का दिन। सन् 1975 में संयुक्त राष्ट्र ने जब अंतर्राष्ट्रीय महिला वर्ष की घोषणा की थी, तब से इस दिन की सुगबुगाहट शुरु हुई थी और आज आलम यह है कि सिर्फ जुलूस, महिला संगठनों, रेडियो, टी.वी. कार्यक्रमों तक ही यह दिन सीमित नहीं रहा है, बल्कि कॉरपोरेट और व्यापारी वर्ग भी इसमें शामिल हो गया है। इस दिन के तहत कोई शोरूम महिला सप्ताह मनाता है तो कोई पूरे माह महिलाओं को सामान की खरीददारी पर छूट देता है। ठीक है कि वे अपना व्यापार बढ़ाने और मुनाफा कमाने के लिए महिला सेगमेंट को संबोधित करते हैं, मगर इससे जागरुकता भी बढ़ती है। इस जागरुकता को हम उद्योग और हर सेक्टर में महिलाओं की उपस्थिति के रूप में देख सकते हैं। चाहे राजनीति हो, बैंक हों, उद्योग हों, चैनल्स हों, रेडियो, फिल्में और विज्ञापन, मॉडलिंग, इंजीनियर, एमबीए, खेल, यहां तक कि पर्वतारोहण और तमाम तरह कि एडवेंचर हों, महिलाओं ने हर जगह अपनी उपस्थिति दर्ज़ कराई है। इसका कारण यह है कि इन तीस-चालीस सालों में महिलाओं को खूब अवसर मिले हैं। तमाम संगठनों, सरकारों ने तो उनके हित में योजनाएं चलाई ही हैं, कानून और अदालतों ने भी उनका साथ दिया है। अपनी मेहनत से उन्होंने साबित भी किया है कि हम किसी से कम नहीं।

गांव-गांव जगती शिक्षा की अलख ने माता-पिता को भी समझाया है कि बेटी को पढ़ाने और आत्म-निर्भर बनाने का अर्थ है न केवल परिवार, बल्कि समाज को आगे बढ़ाना।

लेकिन बाहरी दुनिया में सफल होती महिलाओं और उनके स्टीरियो टाइप्स ने उन महिलाओं को धकेल कर बाहर कर दिया है, जो पिछली पीढ़ियों में थीं। बेशक वे शिक्षित नहीं थीं, लेकिन अपने अनुभव की शिक्षा में किसी से कम भी नहीं थीं। उनके पास पैसे नहीं थे, मगर बचत की आदत से वे कम पैसों में लंबे-चौड़े परिवार की ज़िम्मेदारी उठा लेती थीं।

इन महिलाओं को किसी ने रोल मॉडल नहीं बनाया, शायद इनमें ऐसा बनने की चाहत भी नहीं थी। इन्हें तो घुट्टी में पिलाया गया था कि अगर तुमने अपने परिवार को ठीक से चला लिया तो समझो इस जगत को जीत लिया।

बेशक वे गणित की बड़ी प्रॉब्लम्स को हल न कर पाती हों, मगर ज़िंदगी के गुणा-भाग को बहुत अच्छी तरह से जानती थीं। स्वेटर की बाजू बनानी है तो कितने फंदे जोड़ने हैं और कितने घटाने हैं, इन्हें पता था। एक सलवार, कुर्ता या पेटीकोट सिलने के लिए कितना गज़ कपड़ा चाहिए यह इन्हें मुंह ज़बानी याद था। मिर्च या आम के अचार में कितनी हल्दी, कितना सौफ, कितना नमक, तेल चाहिए, होली आने से कितने दिन पहले आलू के चिप्स बनाएं कि होली तक सूख जाएं, गुझिया बनाने के लिए कितना खोया, चीनी, किशमिश, गोला चाहिए, यह इन्हें किसी मास्टर शेफ ने नहीं सिखाया था, बल्कि यह ट्रेनिंग इन्होंने अपनी माओं और इनकी माओं ने अपनी माताओं से ली थी। परंपराएं सिखाने का हिस्सा थीं और घर सबसे बड़ा ट्रेनिंग स्कूल।

जिसे आज स्त्री विमर्श अंतर्राष्ट्रीय बहनापा कहता है, उसे ये स्त्रियां बहुत

ही बेहतर तरीके से जानती, अपनाती थीं। ऊपर जितने काम गिनाए गए हैं, उनके लिए आज की पैसा कमाने वाली स्त्रियां पूरी तरह से बाज़ार पर निर्भर हैं। वे ब्रांड्स के जादू में फंसी हैं।

जिन घरेलू महिलाओं की बात हम कर रहे हैं, उनके भी अपने ब्रांड होते थे, चाहे बहुत लोकल ही सही। जैसे कि फलां की बहू ऐसे गुलाब जामुन बनाती है कि बाज़ार में ढूंढ़े नहीं मिलें। कोने वाली ताई की कढ़ी के क्या कहने, बस खाओ और उंगलियां चाटो।

इन महिलाओं की ये खासियत किस्सों, कहानियों या किसी दूसरी दुनिया की नहीं, बल्कि अपने ही दशक की है। बहुत से लोग इन दिनों कहते हैं कि महिलाओं के एम्पावरमेंट में महिलाओं के लिए काम करने वाले स्वयं सहायता समूहों का बहुत बड़ा हाथ है। सेवा का उदाहरण दिया जाता है कि किस तरह उसने महिलाओं को अपने पांव पर खड़ा होना और बचत करना सिखाया, लेकिन यदि अपनी मां, चाची, ताई-बुआ को याद करें तो उनके पास हमारी तरह के पर्स और बैग्स नहीं होते थे। पर्स और कंधे पर लटके बैग्स महिलाओं की आत्म-निर्भरता और क्रय शक्ति के प्रतीक हैं। मगर उन महिलाओं के बक्सों में, भगवान की तस्वीरों के पीछे या सिरहाने तकिए के नीचे, छोटी-छोटी, रंग-बिरंगी पुरानी साड़ी से फाड़े कपड़े से बनाई पोटलियां मिलती थीं। जिनमें इनकी छोटी-छोटी बचत मौजूद रहती थी, जो किसी बुरे वक्त, किसी आपदा के वक्त काम आती थी।

वक्त पर दूसरे की मदद इन्हें विरासत में मिलती थी।

इन्हें स्वयं सहायता समूह बनाने के लिए किसी रजिस्ट्रेशन की ज़रूरत नहीं होती थी, बल्कि एक के वक्त पर दूसरे की मदद इन्हें विरासत में मिलती थी। त्योहार, शादी, नामकरण, मुंडन कोई भी अवसर हो, अड़ोस-पड़ोस की महिलाएं बिना कहे जुट जाती थीं। किसी के यहां पापड़, बड़ियां, चावल की कुरेरी, कांजी, सब कामों में मिलकर हाथ बंटाती थीं। यहां तक कि शादी या किसी समारोह के अवसर पर ये महिलाएं उस घर की मालकिन को मुक्त करके सारा काम अपने हाथ में ले लेती थीं। पूरी बारात के लिए पूड़ी बनाने का काम ये इतनी सहजता से करती थीं कि शायद आज के केटरर सोच भी नहीं सकते। इसके लिए इन्हें कोई पैसे नहीं मिलते थे, मगर यही सही मायने में पड़ोसदारी और बहनापा था।

और तो और, जब न इतने अस्पताल थे, न इतने डॉक्टर, न ही इतनी स्वास्थ्य योजनाएं, तब ये महिलाएं दाई की मदद करने के लिए खुद ब खुद पहुंच जाती थीं। कोई पानी गरम कर रही है तो कोई बच्चे की नाल काटने के लिए चाकू आंच में लाल कर रही है, जिससे कि बाद में जब उसे ठंडा करके नाल काटी जाए तो चाकू में किसी भी प्रकार का संक्रमण न रहे। नाल को सुखाकर सहेज कर रखने का भी रिवाज़ था। बच्चे के बीमार पड़ते ही इस नाल को घिसकर बच्चे को चटा दिया जाता था और बच्चा ठीक हो जाता था।

आज स्टेम सेल थैरेपी के तहत इस नाल के खून को सहेजने के लिए कार्ड ब्लड बैंक्स अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर स्थापित किए जा रहे हैं। कहा जाता है कि इस खून से बच्चे को आजीवन छिहत्तर गंभीर रोगों से बचाया जा सकता है। भारत में भी ये बैंक्स बहुत लोकप्रिय हो रहे हैं। मगर हमारी इन औरतों को यह कैसे पता चला कि नाल में गंभीर रोगों का इलाज मौजूद है, यह शोध का विषय ज़रूर है।

कबाड़ से जुगाड़

चूंकि इनमें से अधिकतर महिलाएंआज के मानकों से पढ़ी-लिखी नहीं थीं, इसलिए इनकी किसी भी विशेषज्ञता को रेखांकित करने योग्य नहीं समझा गया। देखा जाए तो एक तरीके से स्त्री विमर्श और महिलाओं के एम्पावरमेंट का नारा देने वालों ने भी परंपरा से प्राप्त इनके ज्ञान की उपेक्षा ही की। परंपरा से प्राप्त इनके ज्ञान में सिर्फ खाना बनाना, पशुपालन, कृषि, जानवरों की देखभाल, फूल गूंथना, घी-मक्खन निकालना ही नहीं, बल्कि जिस रिसाइक्लिंग को आज बच्चों के कुरीकुलम का हिस्सा बनाया जा रहा है या कबाड़ से जुगाड़ करने की बातें की जा रही हैं, इसे भी ये महिलाएं बेहतरीन ढंग से जानती थीं। कोई चादर फट गया, वह किस काम आएगा, रंग न उड़े हों तो कुर्सी की गद्दियां, तकिए के गिलाफ, रूमाल, पेटीकोट, सलवार कुछ भी बनाया जा सकता है। तौलिया फट गया तो इसका पायदान क्या बुरा है। कोई डिब्बा खाली हुआ तो फेंकना क्यों, कुछ और रखने के काम आ जाएगा। कोई कप या गिलास चटक गया तो फूलदान बन जाएगा। और तो और बची दाल, सब्जियों का इस्तेमाल करके परांठों से लेकर विभिन्न व्यंजन तैयार कर दिए जाते थे। स्वाद का स्वाद और बचत की बचत। हाल ही में चेन्नई में वहां की सामाजिक कार्यकर्ताओं, कलाकारों, डॉक्टरों, नृत्यांगनाओं और बहुत-सी स्त्री प्रोफेशनल्स ने एक मुहिम शुरु की है। वे स्कूलों में जा-जाकर बता रही हैं कि हमारी भारतीय स्त्री अरसे से कितनी शक्तिशाली और मज़बूत रही है। उसने परिवार जैसी संस्था को चलाया है, जिसे चलाना काफी कठिन है। पश्चिमी देश इस मामले में विफल हो चुके हैं, मगर वहां की महिलाओं को ही भारत में आदर्श की तरह प्रस्तुत किया जा रहा है। इस मुहिम में गोल्डमैन सॉच की रिपोर्ट के आधार पर बताया जा रहा है कि भारतीय महिलाओं की घरेलू बचत के कारण विश्व भर में आई मंदी का यहां कोई खास असर नहीं पड़ा।

वायब्रेशन्स को श्रेष्ठ रखें

नारी के सामने कई प्रकार की परिस्थितियां आती हैं, कुछ बाहरी और कुछ घर की। लेकिन नारी को चाहिए कि वो अपने स्वमान में रहकर अपने व्यवहार से, अपनी चलन से सभी को दैवी स्वरूप की अनुभूति कराए। देह-अभिमान के संस्कार नहीं होने चाहिए क्योंकि देहाभिमान होने से नारी खुद को उस हिसाब से ही तैयार करती है, फिर वैसा ही प्रभाव हो जाता है। हमें अपने वायब्रेशन्स को अपनी आत्मा तथा शरीर दोनों के प्रति इतने पवित्र बनाने चाहिए कि किसी को भी हमारे प्रति कोई भी ऐसी वासना या गलत सोच उत्पन्न ही न हों। एक होता है मेरा किसी में मोह न हो और दूसरा होता है, इतनी पवित्रता हो कि किसी और का भी मेरे में मोह न हो क्योंकि वो सूक्ष्म में ही सही खींचता तो है ना। ब्रह्माकुमारी मोहिनी वर्तमान समय अमेरीका में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की अध्यक्षा हैं। अमेरीका एवं कैरेबियन देशों की प्रादेशिक संयोजिका हैं तथा यू.एन. में प्रजापिता ब्रह्माकुमारी ईश्वरीय विश्व विद्यालय की प्रतिनिधि भी हैं।
-ब्रह्माकुमारी मोहिनी, वरिष्ठ राजयोग शिक्षिका, न्यूयॉर्क, अमेरीका

अध्यात्म बल की ज़रूरत

असुरों यानी विकारों का नाश कोई आम महिला नहीं कर सकती। इसके लिए आत्म-बल एवं मनोबल की आवश्यकता है जिनका आधार अध्यात्म बल है। देवियों को शिव की शक्ति कहा जाता है अर्थात् उन्होंने शिव पिता परमात्मा से शक्तियां धारण की थीं। आज पुन: वो समय आ चुका है जब माताओं और बहनों को भौतिकता से खुद को समेटकर और परमात्मा शिव से फिर से बल लेकर खुद को जागृति की ओर ले जाना होगा। इससे आसुरी वृत्तियां उनके सामने आने से घबराएंगी। माँ वैष्णो के मंदिर में कोई मूर्ति नहीं है, सिर्फ एक पिंडी है। अब वास्तव में उनका शरीर तो था ही और असुर जब उनके पीछे दौड़ा तो शरीर देखकर ही दौड़ा लेकिन माता ने अपनी सकारात्मक ऊर्जा से, शक्तिशाली प्रकम्पन से, आध्यात्मिक बल से इतना अपने आपको ऊँचा उठाया कि असुर को शरीर दिखाई ही नहीं दिया और वह केवल आत्मा-रूप में ही नज़र आई। यही बात ज्वाला देवी और अन्य देवियों की है। आज भी वे माताएं-बहनें जिनमें चारित्रिक बल है वे ऐसे कर्तब दिखा देती हैं। - ब्र.कु. आशा, निदेशिका, ओ.आर. सी. गुड़गांव।